Revati

रेवती

----- फकीर मोहन सेनापति
(सेनापति जी की पहली ओडिया कहानी)

"हाय रेवती! हाय कलमुँही! हाय कुलभक्षणी! "

कटक जिले के हरिहरपुर परगने में एक छोटा-सा कस्बा था, नाम था पाटपुर। गाँव के अंतिम छोर पर एक घर था । घर में आगे-पीछे चार कमरे थे । आंगन की दीवार से सटी हुई ढेंकीसाल थी, बीच में एक कुँआ था । एक सदर दरवाजा जो आगे की तरफ खुलता था । पीछे की तरफ बाड़ी में किवाड़ खुलता था । बैठक खाने में बाहर के लोग आकर बैठते थे। प्रजा लगान देने के लिए यहाँ पर आकर प्रतीक्षा करती थी। श्यामबंधु मोहंती जमींदार की तरफ से गाँव के मुनीम होने के नाते महीने में दो रुपए वेतन के अलावा रसीद लिखने के लिए अलग से दो पैसे लेते थे। सब मिलाकर महीने में चार रुपए से कम नहीं मिलते थे। परिवार का किसी भी तरह से गुजारा हो रहा था। किसी भी तरह से ही क्यों ? अच्छी तरह से गुजर-बसर हो जाती थी। घर में यह नहीं, वह नहीं है ऐसी किसी के भी मुख से बात नहीं निकलती थी। बाड़ी में साग-भाजी के अतिरिक्त मुनगा के दो पेड़ थे । घर में साल भर दूध देने वाली दो गाएँ थीं । जब भी ढूँढो, थोड़ा-सा दूध, थोड़ी-सी लस्सी, हाँडी में चिपकी हुई मिल ही जाती थी। गोबर की छोटी-छोटी थपड़ियाँ बनाती हुई एक बुढ़िया माँ थी । जलाने के लिए लकड़ी खरीदने की कभी कोई आवश्यकता नहीं रही । जमींदार द्वारा दी हुई साढ़े तीन बीघा जमीन खेती करने के लिए भी थी । धान ठीक ठाक ही मिल जाता था । श्यामबंधु एक सीधे सादे इंसान थे। प्रजा उनका मान सम्मान करती थी। प्रजा उनको दिल से चाहती थी। बहला- फुसलाकर घर-घर घूमकर वह प्रजा से लगान वसूली का काम करते तथा चार अंगुली चौड़े तालपत्र पर रसीद लिखकर छप्पर पर लटकाकर चले जाते थे। जमींदार के प्यादे आने से लगान नहीं देने वालों के साथ मारपीट करते थे। श्यामबंधु हुक्का पानी का पैसा देकर उन्हें लौटा देते थे । उनके परिवार में चार जन थे। पति-पत्नी, बूढ़ी माँ और दस साल की छोटी लड़की-- रेवती। श्यामबंधु बरामदे में बैठकर कृपासिंधु 'बंदन' भजन गाते थे। कभी-कभी दीपदानी पर दीए जलाकर भागवत का पाठ करते थे। पास में बैठकर रेवती सुनती रहती थी। सुनते-सुनते वह बहुत सारे भजन सीख भी गई थी । बच्ची की आवाज में भजन सुरीले लगते थे। शाम को कोई-कोई आकर बैठ जाते थे बाप- बेटी के भजन सुनने के लिए। रेवती ने पिताजी से एक भजन

सुन रखा था। जिनको गाने पर श्यामबंधु बहुत खुश हो जाते थे और हर दिन उसको वह भजन सुनाने के लिए कहते थे और रेवती गाती थी,

"किसे करूँ गुहार,
तुम्हारे बिना यह दीन अनाथ
करो या न करो, मेरा त्राण
तुम्हारे चरणों में समर्पित हैं मेरे प्राण
हृदय में तेरा ही नाम,
तुम्हारे बिना यह जगत सूना, हे भगवान !
शीतल करो मेरा जीवन
अपना प्रेमामृत कर दान। "

दो साल पहले स्कूल के डिप्टी इंस्पेक्टर इस कस्बे में दौरे के दौरान वहाँ एक रात रुक गए थे। गाँव के चार-पांच मुखिया लोगों ने उनसे स्कूल खुलवाने का निवेदन किया तो इंस्पेक्टर साहब ने अपने ऊपर वाले अधिकारियों से कहकर एक स्कूल खुलवा दिया। मास्टरजी का वेतन महीने में चार रुपए सरकार देती थी और मास्टरजी हर बच्चे से एक आना वसूल करते थे। मास्टरजी ने कटक नार्मल स्कूल के प्रशिक्षण विभाग से प्रशिक्षण की योग्यता प्राप्त की थी। मास्टरजी का नाम था वासुदेव। नाम जैसा, आदमी भी वैसा। नौजवान के अंदर की तरह बाहरी रुप रंग भी। गाँव के बीच जाते हुए कभी भी सिर उठाकर किसी को भी नहीं देखते थे। उम्र करीब बीस साल। रुपरंग अति सुंदर था । पर बचपन में कभी पीलिया हुआ था। माँ ने बोतल गरम करके उसके सिर पर चिपका दी थी। वह दाग अभी भी मौजूद था। पर उसके चेहरे पर वह दाग अच्छा दिखता था। बचपन से वासुदेव अनाथ, मामा के घर पला बढ़ा, जाति से कायस्थ था । श्यामबंधु भी जाति से कायस्थ थे। कभी घर में त्यौहार के समय पीठा मिठाई बनने पर श्यामबंधु पाठशाला में जाकर वासुदेव को घर आने का न्यौता देकर आते थे कि मौसी ने तुम्हें शाम को बुलाया है पीठा खाने के लिए। इस तरह घर आने जाने से उनमें घनिष्ठता बढ़ती गई। रेवती की माँ वासुदेव को देखकर कहती थी, "आह! बिन माँ का बच्चा है। क्या खाता है, क्या पीता है? कोई ठिकाना नहीं है । उसे देखने कि लिए कोई नहीं है।" वासुदेव को आते हुए देखकर रेवती चिल्लाकर पिताजी से कहती थी, "बाबा, देखो, वासुभाई आए हैं।

रेवती शाम के समय पिताजी के पास बैठकर वासुदेव को पुराना भजन सुनाने लगती थी। बार-बार सुना हुआ भजन भी वासुदेव को नया- नया लगता था।

एक दिन बातों-बातों में श्यामबंधु ने सुना कि कटक में लड़कियों का एक स्कूल है, जहाँ सिर्फ लड़कियाँ पढती हैं तथा सिलाई-बुनाई का काम सीखती हैं। उसी दिन से रेवती को पढ़ाने के लिए श्यामबंधु ने

अपने मन में निश्चय कर लिया और अपने मन की बात वासुदेव के सामने रख दी। वासुदेव श्यामबंधु को पिता के तुल्य मानता था। वह कहने लगा, "जी, मैं भी आपसे वही बात कहने वाला था।"

दोनों के परामर्श से यह तय हुआ कि रेवती पढ़ाई करेगी। रेवती पास में बैठकर सुन रही थी और दो छलांग मारकर घर के अंदर चली गई और माँ और दादी को "मैं पढ़ूँगी, मैं पढ़ूंगी" की खबर सुना दी। माँ ने कहा, "ठीक है बिटिया, तुम पढ़ोगी।" पर दादी ने कहा, "क्या पढ़ेगी रे? औरत जात का पढ़ाई लिखाई से क्या ताल्लुक? खाना बनाना सीख, रंगोली बनाना सीख, पीठा बनाना सीख, दही बिलोना सीख। पढ़ लिखकर क्या करेगी? "

रात में श्यामबंधु बरामदे में बैठकर खाना खा रहे थे साथ में रेवती भी खा रही थी। उनकी बूढ़ी माँ सामने बैठ कर "और थोड़ा-सा खाना ला, नमक ठीक है या नहीं" आदि बहू को आदेश के रुप में कह रही थी. बातों-बातों में बूढ़ी माँ ने कह दिया, "श्याम, रेवती पढ़ेगी? औरत जात का पढ़ाई-लिखाई से क्या मतलब? "

श्यामबंधु कहने लगे, "वह अगर पढ़ना चाहती है तो उसे पढ़ने दो। नहीं देख रही हो शंकर पटनायक की लड़कियाँ किस तरह से भागवत सुना देती हैं। वैदेही विलास के छंद गा लेती हैं।" रेवती गुस्से में दादी माँ को गाली देने लगी "बूढ़ी खूसट, दादी सठिया गई है। मैं तो पढ़ने जाऊँगी ।"

श्यामबंधु ने कहा, "हाँ, हाँ तुम जाओगी ।"

बात उस दिन उतने तक सीमित रही।

दूसरे दिन दोपहर के ढ़लने के बाद वासुदेव ने 'सीतानाथ बाबू के प्रथम पाठ' नामक किताब रेवती को लाकर दी और रेवती खुशी-ख़ुशी पिताजी के पास बैठकर किताब को आरंभ से अंत तक पन्ने पलटकर देखने लगी। हर पन्ने में हाथी, घोड़ा, गाय आदि चित्र देखकर वह बहुत खुश हो गई। राजा महाराजा हाथी घोड़ा पालकर खुश होते हैं, कोई हाथी घोड़ों पर सवार होकर खुश होता है मगर हमारी रेवती हाथी घोड़ों के केवल चित्र देखकर प्रसन्न हो जाती है। दौड़ते हुए किताब लेकर वह घर के अंदर गई तथा माँ को वह चित्र दिखाने लगी। उसके बाद जब वह दादी माँ को दिखाने गई तो वह झुंझला गई और कहने लगी, "जा, जा हट। "

रेवती दादी को चिढ़ाते हुए कहने लगी, "बूढ़ी खूसट दादी ।"

आज अच्छा दिन है बसंत पंचमी। रेवती सुबह से ही तालाब में नहाकर नए कपड़े पहनकर तैयार हो गई और सोचने लगी आज वासुभाई आकर उसे किताब पढ़ाएँगे। बूढ़ी दादी के ड़र से श्यामबंधु ने विद्या आरंभ का कोई आयोजन नहीं किया। छ बजे के करीब वासुदेव ने आकर रेवती को पढ़ाना प्रारंभ किया, "स्वर अ, स्वर आ, छोटी इ, बड़ी ई, छोटा उ, बड़ा ऊ" इस तरह पढ़ाई का काम शुरु हुआ।

रोज शाम को वासुदेव आकर पढ़ाकर जाता था। दो साल में रेवती ने बहुत कुछ लिखना पढ़ना सीख लिया। मधुराव की छंदमाला पढ़ने के प्रवाह में कहीं रुकावट नहीं आती थी। एक दिन रात के समय श्यामबंधु बैठकर खाना खा रहे थे। माँ बेटा दोनों में कुछ कानाफूसी होने लगी। शायद पहले से कुछ बात हुई होगी। आज उस बात का उपसंहार था।

श्यामबंधु - "माँ क्या ये अच्छा नहीं होगा? "

बूढ़ी - "अच्छा तो होगा, मगर जाति के बारे में पूछताछ की है? "

श्यामबंधु - "और आज तक मैं क्या कर रहा था ? कायस्थ है। गरीब है पर अच्छी जाति का है।"

बूढ़ी - " धन-दौलत से क्या लेना देना? पहले जाति के बारे में ध्यान दो। घर में रहेगा तो? "

श्यामबंधु - "और उसका है कौन? मामा- मामी के पास थोडा ही जाएगा? "

रेवती पास में बैठकर खाना खा रही थी। इस बातचीत से क्या समझी, मालूम नहीं। पर उसी दिन से उसकी चाल - ढ़ाल बदल गई थी। पिताजी के सामने वासुदेव अगर पढ़ाने बैठते तो उसे शर्म आती थी। सिर झुकाकर होंठ दबाकर हँसी छिपाती थी। आजकल वासु भाई के पढ़ाने के समय सिर्फ 'हूँ हाँ' करती है। धीरे-धीरे पढ़ती है और पढ़ाई खत्म होने पर मुस्कराते हुए घर के अंदर चली जाती थी। रोज शाम को दरवाजा पकड़कर न जाने किसकी राह देखा करती थी। और वासुदेव को देखकर घर के अंदर चली जाती थी। पाँच बार बुलाने पर भी घर से बाहर नहीं निकलती थी। अब तो रेवती के बाहर निकलते ही बूढ़ी माँ खफा हो जाती थी।

देखते-देखते ही बसंत पंचमी से अगली बसंत पंचमी तक दो साल हो चुके थे। यह तो विधाता का विधान है किसी के भी दिन एक समान नहीं होते हैं। फागुन का महीना चल रहा था, कहीं पर भी कुछ नहीं था। देखते-देखते ही अचानक कहीं से खबर पहुँची कि मुनीम श्यामबंधु के ऊपर देवी (हैजा) का प्रकोप हुआ है। गाँवों और कस्बों में हैजा की महामारी फैलने से लोग अपने घरों के खिड़की और दरवाजे बंद कर देते हैं। मानो हैजा जैसी डायन बुढ़िया अपनी टोकरी में रास्ते से आदमियों को उठाकर भर लेती थी। ऐसा ही सब लोग समझते थे। किसी के भी घर कोई नहीं जाता था। श्यामबंधु के घर में दो औरते क्या कर सकती थी , बच्ची ही सबको बुला-बुलाकर घर के अंदर-बाहर सब काम कर रही थी। वासुदेव सुनते ही स्कूल से भागकर उनके घर आ गया। उसके मन में कोई डर, चिंता नहीं थी। वह श्यामबंधु के पास बैठकर उनके पैरों पर अपना हाथ घुमाने लगा तथा मुँह में बूंद-बूंदकर पानी पिलाने लगा। दिन के तीन पहर समय तक श्यामबंधु वासु के मुँह की तरफ देखते हुए तुतलाते हुए कहने लगे, "वासू, एँ-एँ, आँ- गिला।" (वासु यह वंश आपके हवाले छोड़कर जा रहा हूँ।)

वासु जोर-जोर से चिल्ला-चिल्लाकर सबको बुलाने लगा। घर में चहल-पहल होने लगी। रेवती जमीन पर लेटे-लेटे रोने लगी। गाँव के लोग सुनकर कहने लगे, "देखो, देखो, क्या हो गया? देखते-देखते ही श्यामबंधु खत्म हो गए। क्या करेंगे? वासुदेव तो कल का बच्चा है और घर में दो जवान औरते। गाँव का धोबी बनासेठी एक अनुभवी आदमी है। पचास साठ उम्र पार कर चुका है। कल जाना है या आज। आज जाने से दो-चार कपड़े लत्ते मिलने की उम्मीद है। गमछे को कमर में बांधकर कुल्हाड़ी कंधे पर डालकर वह हाजिर हो गया था। गाँव में कायस्थ कहने से वह एक ही परिवार था। सास, बहू, वासुदेव तीन जन ने मिलकर उनका अंत्येष्टि कर्म कर लिया। उस दुर्दिन के बाद की हालत लिखने के लिए मैं अक्षम हूँ। श्मशान से लौटते समय भोर के तारे नजर आने लगे थे। घर के अंदर घुसते-घुसते ही रेवती की माँ को पतली दस्तें लगना शुरू हो गई।

देखते-देखते दोपहर को गाँव में यह बात फैल गई कि रेवती की माँ भी नहीं रही।
रेवती बैठे-बैठे दिन गिन रही है। पूरे छः दिन बीत चुके हैं। माँ-बाप के गुजरने के बाद से घर के बाहर झाँकी तक नहीं थी लेकिन आज दो-बार घर से बाहर आकर देखकर चली गई थी। समय लगभग सुबह के छः बज रहे होंगे। हरिहरपुर से सभी बच्चे लौट आते ही गाँव के लोगों ने बातें करनी शुरू कर दीं, ---"हरिहरपुर से लौटते समय गोपालपुर के पास बरगद के नीचे ही मास्टरजी को पतली टट्टी शुरू हो गई। चार बार पाखाना गए और आधी रात के समय उनका देहान्त हो गया।" गाँव के लोग हाय-हाय कर रहे थे। लड़के-लड़कियाँ, माताएँ, औरतें सब चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगे। किसी ने कहा-" आह! कितना सुंदर रूप था," किसी ने कहा-" कितना सज्जन एवं सुशील था,"

किसीने कहा- " रास्ते पर चलते समय मक्खी भी ना मरे, इतना ध्यान रखता था वह मास्टर जी। "

रेवती ने सुना, बूढ़ी ने भी सुना। रोते-रोते बूढ़ी का कण्ठ रूंध-सा गया और वह रो नहीं पाई। आखिर में बूढ़ी इतना ही कह पाई- " बेचारे ने विदेश में आकर अपनी बुद्धि के कारण प्राण त्याग गया दिए। " बूढ़ी यह कहना चाह रही थी कि वासुदेव अपनी दुर्बुद्धि से रेवती को पाठ पढ़ाने के कारण से ही मर गया। अन्यथा वह कभी नहीं मरता। सुनने के बाद से ही रेवती घर के अन्दर पड़ी हुई थी। कोई शब्द नहीं कि होश भी नहीं। ऐसे ही वह दिन बीत गया। उसके अगले दिन सुबह रेवती को पास में नहीं देखकर बूढ़ी चिल्लाने लगी- "हाय रेवती! हाय रेवती ! हाय कलमुँही! हाय कुलभक्षणी! "

बूढ़ी पागल जैसे हो गई थी, रोना-धोना कुछ भी नहीं, केवल गुस्से में दिन और रात रेवती को ही गाली दे रही थी। पड़ोस के लोग रास्ते में आने-जाने वाले जब चाहे तब सुन रहे थे "हाय रेवती! हाय रेवती ! हाय कलमुँही! हाय कुलभक्षणी! "

बूढ़ी को आँखों से ठीक से दिख नहीं रहा था, खोज खोजकर बड़ी मुश्किल से वह रेवती के पास पहुँची, उसको बुलाया, कुछ भी जवाब नही पाकर उसने रेवती के शरीर के ऊपर हाथ घुमाया। जोर से बुखार था, उसका शरीर आग की तरह ताप रहा था, उस को होश भी नहीं था। काफी देर तक बूढ़ी बैठे-बैठे

कुछ सोचती रही। क्या करेगी, किसको बुलाएगी. मन ही मन पूरे गाँव को टटोल लिया। पास में कोई नहीं मिला। कुछ निर्णय नहीं कर पाई। आखिरी में खफा होकर बोली, "जान-बूझकर खड़ी की गई समस्या का समाधान कहाँ?,लड़की होकर तुमने पढ़ाई की इसीलिए तुम्हे बुखार हुया । इसमें मैं क्या कर सकती हूँ? "

एक दिन बीता, दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवाँ दिन भी बीत गया। रेवती जैसे कि मिट्टी के ऊपर चिपक गई थी। ना ही आँख खोल रही थी, बुलाने से भी कोई उत्तर नहीं, हँ-हाँ कुछ भी नहीं। छठवाँ दिन था, आज सुबह से रेवती ने दो-चार बार आवाज दी । आवाज सुनकर बूढ़ी उसके पास में गई। शरीर के ऊपर हाथ लगाकर देखा - हाथ-पाँव ठंडें, बुलाने से हूँ-हूँ कर जवाब दिया। घूर घूरकर वह मुँह ताक रही थी। कुछ नहीं पूछने से भी कितना कुछ पूछ रही थी। कोई वैद्य देखते, कहते , "तृष्णादाह प्रलापश्च।" इस तरह श्लोक पढ़कर कहते, "सन्निपातस्य लक्षणम्।" लेकिन बूढ़ी कुछ खुश हो गई। शरीर में बुखार नहीं था। बात नहीं कर रही थी लेकिन अब मुँह खोलने लगी। देख नहीं रही थी अब आँख खोलने लगी थी। पीने के लिए पानी माँग रही थी। पूरे छः दिन हो गए थे। जुबान पर एक बूँद पानी नहीं लगा था। कुछ खाना पेट में जाएगा तो बच्ची उठकर बैठेगी।
" तू सोते रह मैं कुछ खाना पका कर ला रही हूँ।" -- यह कहकर बूढ़ी बाहर चली गई। खाना क्या पकाएगी? घर में डिब्बा, टोकरी सब टटोल लिया। कहीं भी एक मुट्ठी चावल नहीं मिला। एक लंबा सांस छोड़कर कुछ देर तक बैठी रही। वासु पाँच दिन का राशन देकर गया था उसमें किस तरह से दस दिन निकल गए थे, आँखों में रोशनी होती तो शायद बूढ़ी समझ पाती। जो भी हो शांति से विचार करने से बुद्धि निकलती है। घर में काँसा-बर्तन कुछ भी नहीं था। हाथ में एक पुराना टूटा-फूटा लोटा आया। उसी को लेकर हरिसाहु की दुकान की तरफ निकल पड़ी। हरिसाहु का घर गाँव के ठीक बीच में था। उसकी रोजाना खुलने वाली दुकान नहीं थी। यही कुछ चावल-दाल, नमक-तेल ही रखता था। किसी दिन कोई विदेशी पहुँच जाता तो वही खरीदता, नहीं तो जरुरत के समय कभी- कभार गाँव के लोग खरीदते थे। बूढ़ी किसी भी तरह लोटा पकड़कर हरिसाहु के दरवाजे पर पहुँच गई। बूढ़ी के हाथ में लोटा देखकर हरिसाहु सब समझ गया। अपना अभिप्राय बूढ़ी के मुँह से सुनने के बाद हरिसाहु ने लोटे को अपने हाथ में ले लिया। लोटे को उलट-पलट कर देखा और वह कहने लगा, " मेरे घर में चावल-वावल कुछ नहीं है। ऐसे टूटे-फूटे लोटे के बदले कौन चावल देगा? " हरिसाहु के घर में चावल नहीं था या चावल देने की इच्छा नहीं थी- यह बात नहीं थी। सस्ते में फायदा उठा लेने के लिए ही वह एक ढोंग था। चावल नहीं है, सुनकर बूढ़ी के सिर पर जैसे कि बिजली गिर गयी । क्या करेगी, बच्ची अभी-अभी बुखार से उठी है, उसके मुँह में क्या डालेगी? कुछ देर तक वह ऐसे ही बैठी रही।
"साँझ हो रही है। चलती हूँ। बच्ची क्या कर रही है देखती हूँ।" कहकर बूढ़ी लोटा लेकर उठ ही रही थी तभी हरिसाहु ने कहा, "दो-दो, लोटा दे दो, देखता हूँ घर में क्या है?" लोटा रखकर हरिसाहु ने एक सेर चावल, थोडी दाल और कुछ नमक दिया। बूढ़ी चार-छह जगह में बैठते-उठते किसी तरह घर पहुँची। अभी तक बूढ़ी ने दातुन भी नहीं की किया था। शरीर और मन के कष्ट की बात किससे कहती। घर

पहुँचते ही उसने रेवती को आवाज दी। उसका विश्वास था कि रेवती ठीक हो गई है, पानी निकाल देगी, रेवती चावल पकाएगी। रेवती से कोई जवाब नहीं पाकर खफा होकर बुलाने लगी- "हाय रेवती! ! हाय कलमुँही! हाय कुलभक्षणी! " पर कोई जवाब नहीं।

इधर रेवती की सन्निपात की बिमारी, धीरे-धीरे बढ़ रही थी, भयानक दर्द, शरीर में जैसे आग निकल रही थी, जुबान सूख गई थी। भयंकर प्यास से जुबान जैसे कि अन्दर खिंची जा रही हो। ठंडी जगह में रहने की इच्छा हो रही थी। लुढ़कते-लुढ़कते बाहर आ गई। फिर भी अच्छा नहीं लगा। घर के पिछवाड़े जाकर चबूतरे पर बैठ गई। दिन ढल रहा था, हवा बह रही थी। दीवार से वह सटकर बैठ गई और पिछवाड़े वाले बगीचे की तरफ देखने लगी। यहीं पर पिछले साल पिताजी ने केले का पौधा लगाया था। उस पर फूल आने लगे है। दो साल पहले माँ ने एक अमरुद का पौधा लगाया था। कितनी खुश होकर रेवती ने कुएँ में से पानी निकाल कर उसमें डाला था। वह पेड़ कितना बड़ा हो गया है ! फूल आ गए हैं। उस पेड़ को देखकर उसे माँ की याद आने लगी। उसकी बुद्धि स्थिर हो गई और मन चंचल हो गया। लगातार बीती हुई सारी घटनाएं एक एक कर याद आ रही थी। माँ की आनन्दमयी मूर्ति आँखो से ओझल नहीं हो पा रही थी। साँझ बीतकर रात हो रही थी। पेड़ के नीचे से, पत्तों के बीच से अँधेरा निकलकर पिछवाड़े वाले बगीचे में भर गया। आँखों को कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। आकाश की ओर देखने लगी, सांझ के तारों में से धक-धक होकर उजाला निकल रहा था। एक ध्यान से रेवती उस तारे की तरफ अपलक देख रही थी। धीरे-धीरे तारे का आकार बढ़ता जा रहा है, चक्र के जैसा दिखाई देने लगा, और बड़ा और बड़ा, और उजाला।

आह! ये किसकी तस्वीर है तारे के अन्दर? शांतिदायिनी, प्रेममयी, आनन्दमयी माँ की अभयमूर्ति बैठकर प्यार से अपनी गोद में आ जाने के लिए बुला रही है मानो हाथ की रेखायों से दो किरणें आगे बढ़ा दी माँ ने, वे दोनों किरणें उसकी आखों को छूते हुए हृदय के अन्दर प्रवेश कर गई। उस अन्धेरे में और कोई शब्द नहीं। केवल साँसो की ध्वनि और प्रबल होती जा रही थी वह ध्वनि और लम्बी साँस और लम्बी। आखिर मे दो-बार माँ-माँ का उच्चारण सुनाई दिया। फिर पूरी बाड़ी निस्तब्ध, नीरव ।

बूढ़ी ने खिसकते हुए जाकर रेवती के सोने की जगह को देखा, वहां पर कोई नहीं था, पूरा घर, बाहर, आँगन, ढेंकीशाल। कहीं नहीं थी रेवती। वह सोचने लगी ठीक हो गई है रेवती, शायद घर के पीछे बगीचे में घूम रही होगी। वही गुस्से वाली पुकार, "हाय रेवती! ! हाय कलमुँही! हाय कुलभक्षणीई ई ई "

थपथपाते हुए वह घर के पिछवाड़े की तरफ गई। वहां एक चबूतरा था, जो कि जमीन से दो हाथ ऊंचा था और दो हाथ चौड़ा था। उस पर पड़ी हुई थी वह। " कलमुँही तू यहाँ बैठी है? " यह कहकर वह उसके शरीर पर हाथ लगाने लगी। शरीर में हाथ लगाते ही बूढ़ी चौंक गई। और एक बार अच्छी तरह से पैर से सिर तक हाथ घुमाया, नाक में हाथ रखकर देखा और उतने में ही चबूतरे से नीचे गिरने का धड़ाम-सा एक शब्द सुनाई दिया ।

श्यामबन्धु महान्ती के परिवार के किसी भी सदस्य को उस दिन के बाद और दुनिया वाले नहीं देख पाए। रात के प्रथम प्रहर में पड़ोसियों ने केवल इतना ही सुना था, "हाय रेवती! हाय रेवती ! हाय कलमुँही! हाय कुलभक्षणी ई ।"

फकीर मोहन सेनापति ((14 जनवरी 1843 - 14 जून 1918) ओडिया साहित्य के व्यास-कवि के रूप में जाने जाते हैं. ओडियाभाषा के पहले कहानीकार होने का श्रेय आपको जाता है. 1898 में लिखी गई भारतीय साहित्य की लोमहर्षक कहानी 'रेवती', अब तक की उनकी उपलब्ध कहानियों में पहली कहानी के रूप में जानी जाती है. अगर उनकी आत्म-कथा की बात मानें तो उन्होंने सन 1860 में 'बोध दायिनी' पत्रिका में 'लछमानियाँ कहानी लिखी थी. मगर अत्यंत दुर्भाग्य की बात है कि उस कहानी का प्रति अब उपलब्ध नहीं हो रही, अन्यथा वह समग्र भारतीय भाषायी साहित्य के पहले कहानीकार होते.

ओडिशा के बालासोर में जन्मे इस लेखक ने अपने जीवन काल में, कई कहानियों के अलावा 'छ माण आठ गुंठ', 'मामूं, 'प्रायश्चित्त' आदि उपन्यास, 'उत्कल भ्रमण', 'पूजाफूल', 'धूलि', 'पुष्प माला' आदि कविता-संग्रह तथा संस्कृत से 'रामायण' और 'महाभारत' के अनुवाद कार्य के अतिरिक्त अनेक पाठ्यपुस्तकों की रचना कर ओडिया साहित्य को सुसमृद्ध किया हैं.

फकीर मोहन सेनापति की रचनाओं की ख़ास विशेषता यह है कि उन रचनाओं में आम आदमी का वर्णन मिलता है, जो तत्कालीन भारतीय गद्य साहित्य में अनुपम दृष्टान्त है. उनके उपन्यास 'छ माण आठ गुंठ' में शोषित वर्ग के प्रति जिस दर्द का बयान किया गया है, वह दर्द सोवियत रूस के 'अक्टूबर विप्लव' के पहले लिखा गया था, इस उपन्यास का अंग्रेजी अनुवाद केलिफोर्निया विश्वविद्यालय की प्रेस द्वारा सिक्स एक्रेस एंड अ थर्ड शीर्षक से प्रकाशित है.